युगतीर्थ शांतिकुंज गुरुदेव का डाक बंगला/ डाक खाना

अखंड ज्योति मई 1972

युगतीर्थ शांतिकुंज पर आधारित हमने अनेकों लेख लिखे हैं सभी लेख हमारी वेबसाइट पर उपलब्ध हैं।वर्तमान लेखों का एकमात्र उद्देश्य है कि शांतिकुंज जाने से पहले हम सब इस युगतीर्थ के बारे में अधिक से अधिक जान लें। ऐसा न होने की स्थिति में हम केवल फव्वारों के आस पास सेल्फी लेकर, बिना इस युगतीर्थ की दिव्यता की जानकारी लिए, बिना तीर्थसेवन लाभ लिए वापिस घर आ जायेंगें। घर आकर जब हमारे समर्पित समयदानी ज्ञानप्रसाद लेखों में अद्भुत जानकारी प्राप्त करेंगें तो अपनेआप को कोसेंगें कि जाने से पहले इसका क्यों पता नहीं था। हम जानते हैं कि कुछ बातें रिपीट हो रही हैं लेकिन किसी बात को मिस करने से बेहतर है

रिपीट करना। हर लेख में हमेशा ही नवीन जानकारी होती है।

1971 के अंतिम और 1972 के आरंभिक अखंड ज्योति अंक विशेष तौर से शांतिकुंज को ही समर्पित हैं। इन अंकों का ध्यानपूर्वक अध्यन करने पर ऐसे कुछ तथ्यों की जानकारी मिलती है जिन्हें अनेकों पाठक आज 50 वर्ष बाद भी नहीं जानते।

परमपूज्य गुरुदेव ने श्री वेदमाता गायत्री ट्रस्ट के अंतर्गत युगतीर्थ शांतिकुंज की स्थापना इसलिए की कि वे इस केन्द्र पर स्वयं आकर और संस्कारी आत्माओं को बुलाकर प्रकाश परामर्श एवं स्नेह सहयोग प्रदान करते रह सकें।

अफसर टूर पर जाते हैं, उनके लिये उपयुक्त परिस्थिति वाले डाक बंगले बने होते हैं। जितनी आवश्यकता होती है उतनी देर ठहर कर अफसर अन्यत्र चले जाते हैं। शांतिकुंज "गुरुदेव का डाक बँगला" है।

गुरुदेव आने वाले दिनों में अपना अधिकतर समय तप साधना करते हुए दादा गुरु के दिव्य संपर्क में लगायेंगे। वहाँ से जो मिलेगा उसे वितरण करने के लिये इस केन्द्र पर आयेंगे। जिस प्रकार कोई श्रमिक परदेस में जाकर मजदूरी करता है और महीने में जो कमाता है उसे डाकखाने में जाकर घर वालों के लिये मनीआर्डर कर देता है, शांतिकुंज गुरुदेव का डाकखाना है। वे आवश्यकतानुसार यहाँ मनीआर्डर करने ही आया करेंगे और अपनी संचित पूँजी एक पिता की भांति अपने बच्चों

में transfer करके चले जायेंगें। कब आयेंगे और कब चले जायेंगे, इसकी उन्होंने पूर्व सूचना न देने का निश्चय किया है। आवागमन तो वे बनाये रखेंगे पर उसकी तिथियों का निश्चय नहीं हो रहा करेगा।

1972 की बसन्त पंचमी 20 जनवरी को थी, तब तक गुरुदेव पर प्रतिबन्ध था सो वह अवधि पूरी होने पर गुरुदेव शांतिकुंज यहाँ आये और कुछ समय ठहर कर अभीष्ट प्रयोजन पूरा होते ही वे चले भी गये। अब कब आयेंगे यह अनिश्चित है पर यह स्पष्ट है कि प्रतिबन्ध की जो थोड़ी अवधि थी वह पूरी हो गई। भविष्य में वे कभी भी आ जा सकते हैं।

माता जी बता रही हैं कि प्रत्यक्ष और तात्कालिक कारण इस समय यह था कि मेरी दशा अचानक चिन्ताजनक

हो गई। हृदयरोग के भयानक तीन दौरे पड़े। डाक्टरों को आश्चर्य था कि इतने तीव्र दौरे से भी कोई कैसे बच सकता है। स्थिति की विषमता मेरे सामने भी स्पष्ट थी। संकोच तो हुआ कि अपने निजी काम के लिये उनके क्रिया कलाप में व्यवधान क्यों उत्पन्न करूं लेकिन दूसरे ही क्षण यह भी ध्यान आया कि मेरी सत्ता भी अब अपनी नहीं रही। विश्व मानव के चरणों पर उन्हीं के द्वारा समर्पित एक फूल भर हूँ। ऐसी दशा में अगले जन्म के लिये उपयुक्त आधार प्राप्त करने के लिये कुछ अनुरोध करूं तो अनुचित न होगा। इस विपत्ति की घड़ी में यही सूझा और यही उपयुक्त लगा। सो उन्हें पुकारा और कहा-यदि यह शरीर जा ही रहा है तो इसे अपने हाथों ठिकाने लगा जायें और अन्तिम समय आँखों के आगे

रहें। इसे मेरा सौभाग्य ही कहना चाहिए कि वे दौड़े चले आये। कुछ समय रहे और जीवनदान देकर चले गये।

माता जी बताती हैं कि पिछले दिनों उनके सौंपे हुए प्रयोजनों को पूरा करते हुए- उपार्जित पूँजी की अपेक्षा खर्च बहुत अधिक होता रहा है। माता जी अपने शरीर और साधना की पूँजी की बात कर रही थीं। व्यक्तिगत साधना कम हो रही थी लेकिन वितरण अधिक हो रहा था। ऐसी दशा में दुर्गति होनी स्वाभाविक थी और हमारी भी हुई। रामकृष्ण परमहंस की गले के केन्सर से मृत्यु, जगद्गुरु आद्य शंकराचार्य का देहावसान Food pipe के अंतिम भाग में फोड़े के कारण, भगवान बुद्ध की मृत्यु पेटदर्द के कारण जैसी घटनाएं महामानवों के

साथ भी घटती रही है। ऐसी स्थिति में उनके पाप, प्रारब्ध या असंयम कारण नहीं बल्कि तप की संग्रहीत पूँजी की तुलना में व्यक्तियों की सहायता और समाज सेवा में खर्च की मात्रा अधिक बढ़ जाना ही उस भोग का कारण था।

प्रकृति किसी को भी क्षमा नहीं करती। आमदनी और खर्च में जब भी बैलेंस का उलंघन होगा तो गड़बड़ी होनी निश्चित है। प्रकृति के निष्ठुर एवम कठोर नियम साधु-असाधु का भी अन्तर नहीं करते।

वंदनीय माता जी बता रही हैं कि हमारे साथ भी कुछ इसी तरह की स्थिति हुई। कुमारी कन्याओं द्वारा अखण्ड दीपक पर अखण्ड जप ही इन दिनों हमारी एक मात्र कमाई है। थोड़ा बहुत स्वयं भी कर लेती हूँ। शेष समय

तो इतने बड़े परिवार को समुचित स्नेह और प्रकाश देने के उत्तरदायित्व का पालन करने में ही लग जाता है। कहने का अर्थ यह हुआ कि अगर कमाई कम हो और खर्चा अधिक हो तो कोई भी दुर्घटना हो सकती है, किसी भी समय इमरजेंसी की स्थिति आ सकती है।

अगर हम कहें कि हमारे साथ भी कुछ ऐसा ही हुआ तो कोई आश्चर्य की बात नहीं। सच पूछा जाय तो हम लोगों की अन्तिम इच्छा भी यही है कि कीड़े मकोड़ों की तरह न मरना पड़े बल्कि एक आदर्श के साथ मरें। गुरुदेव ने तो अपने अंग प्रत्यंगों का दान कष्ट पीड़ितों के लिए पहले ही वसीयत के रूप में कर दिया है लेकिन मेरा रक्त उतना शुद्ध नहीं, इसलिये वैसे अनुदान की अधिकारिणी न बन सकी। लेकिन इतनी अभिलाषा तो

रहती ही है कि किन्हीं कष्ट पीड़ितों की सहायता करते हुए, उनका कष्टभार अपने ऊपर उठाते हुए ही इस शरीर का समापन हो ।जब हमें 3 severe हार्ट अटैक हुए तो उस समय हमें न मरने का डर था, न उदासी , न काया का मोह, न जीने का लोभ। इच्छा केवल इतनी ही थी कि जिस विशाल वृक्ष पर चढ़ कर स्वयं को अमर बेल की तरह ऊँचा और सुनहरी देखा था, जिसका स्नेह रस पीकर विकसित हुई, उसी वृक्ष की सत्ता में अपनी सत्ता सूक्ष्म रूप से तो मिला चुकी थी,अंतिम समय में भी उस प्रकार की समीपता का लाभ मिल जाय तो कितना अच्छा हो। मैंने गुरुदेव को पुकारा तो इसी दृष्टि से था, वे आये भी और चले भी गये। उनके दर्शन इतने दिनों बाद हुए, इसका आनन्द इतना अधिक रहा

जिसकी तुलना में तात्कालिक कष्ट की निवृत्ति की प्रसन्नता बहुत छोटी ही लग रही है।

गुरुदेव जब तक शांतिकुंज में रहे, कुछ न कुछ वार्तालाप भी चलता रहा। कुछ अनुभूतियाँ और उपलब्धियाँ तो ऐसी हैं जो समय से पूर्व प्रकाशित नहीं की जा सकतीं लेकिन उनमें से अनेकों ऐसी हैं जिनमें लोकोपयोगी अंश कम नहीं हैं। ऐसे प्रश्न मैं पूछती ही रही जो परिजनों की दिलचस्पी के थे। वे उत्तर देते भी रहे। उनमें से बहुत सा भाग ऐसा है जो सर्व साधारण के हित में ही होगा, मैंने पूछे भी इसी दृष्टि से थे। यों वे इन्हीं बातों को समय-समय पर दूसरे ढंग से कहते लिखते भी रहे हैं। पर चूँकि बात ताजी है। इन्हीं दिनों, इन्हीं परिस्थितियों में उन्होंने बताई हैं इसलिये उसका

महत्व घटता नहीं बढ़ ही जाता है, गुरुदेव सबकी दिलचस्पी के केन्द्र हैं। उन्हें देखने को करोड़ों आँखें लालायित रहती हैं और करोड़ों कान व्याकुल रहते हैं। ऐसी दशा में मेरे साथ जो बातें होती रहीं उन्हें समस्त विश्व के लिए प्रबुद्ध परिजनों के लिए ही कहा, सुनाऔर समझा जाना चाहिए। इसलिए उनका प्रकाश में लाना और सर्व साधारण तक पहुँचाना ही उपयुक्त समझा गया। वार्तालाप के महत्वपूर्ण अंश नोट कर लिये गये थे। अब इस अंक में उन्हें ठीक ढंग से लिखा और छापा जा रहा है। यह पूरा अंक (मई 1972) उसी वार्ता विवरण का प्रकटीकरण समझा जाना चाहिए।

तपोभूमि मथुरा से 20 जून को हम लोग शांतिकुंज आ गये थे। 10 दिन गुरुदेव यहाँ रहे और 1 जुलाई को

अपने निर्धारित स्थान को चले गये। पूरे 7 माह गुरुदेव अपने साधनात्मक प्रयोजन में लगे रहे। यह अवधि उन्हें विश्व के भविष्य की, खासकर भारतीय राष्ट्र की स्थिति को अन्धकार में धकेल सकने वाली काली घटाओं को हटाने में प्रयत्न करते रहना पड़ा। बँगला देश की स्थिति उन महीनों में अत्यन्त नाजुक दौर से गुजर रही थी । चीन और अमेरिका ने प्रत्यक्ष से भी और परोक्ष रूप में ऐसी दुरभि सन्धियुक्त योजना बनाई हुई थी जो यदि सफल हो जाती तो भारत की स्थिति दयनीय हुए बिना न रहती और पाकिस्तान की दुष्टता आज के मुकाबले में 1000 गुना बढ़ जाती। अगर भारत हारता तो समस्त विश्व की प्रगतिशील शक्तियों के सामने प्रतिक्रिया विरुद्ध ही पड़ती। बँगला देश उन दिनों 30 लाख प्रबुद्ध

और समर्थ लोगों की बलि चढ़ाकर 1 करोड़ विस्थापित शरणार्थी भेजकर दयनीय स्थिति में पड़ गया था। मुक्ति वाहिनी अधूरे साधनों से नाममात्र की लड़ाई लड़ रही थी। सैन्य स्थिति से भी और कूटनीति की स्थिति से भी मुक्ति वाहिनी का पक्ष दुर्बल पड़ता जा रहा था। इस अभूतपूर्व नरसंहार पर विश्व का कोई भी देश मुँह तक नहीं खोल रहा था। संयुक्त राष्ट्रसंघ में प्रश्न आया तो वहाँ भी पाकिस्तान का ही समर्थन किया गया। इन परिस्थितियों में सर्वत्र चिन्ता ही चिन्ता का वास होना स्वाभाविक था ।

लेकिन परिस्थितियों ने जिस तरह पलटा खाया, बाज़ी जिस प्रकार उलटी कि उससे सारा विश्व आश्चर्यचकित रह गया। विश्व कूटनीति के परिचितों में

से किसी को भी यह आशा न थी कि परिस्थितियाँ इस तरह करवट लेंगी और बंगला देश की मुक्ति इस रूप में सम्भव होगी एवं भारत का वर्चस्व एक बार फिर मूर्धन्य स्तर तक पहुँचेगा। इस सफलता का प्रत्यक्ष श्रेय निस्संदेह हमारे राजनेताओं की सूझ-बूझ और सेना के त्याग बलिदान को मिलना चाहिए। वे ही इस श्रेय के अधिकारी भी हैं लेकिन जो सूक्ष्म जगत की हलचलों में विश्वास करते हों उन्हें यह भी जानना चाहिए कि प्रत्यक्ष घटनाक्रम ही सब कुछ नहीं है कुछ अप्रत्यक्ष भी होता रहता है और वह हल्का नहीं काफी वज़नदार होता है।

जब गुरुदेव 1 जुलाई को गये थे तब कुछ और ही वातावरण था और जब जनवरी में लौटे तो परिस्थिति

बिल्कुल दूसरी थी इन सात महीनों में बहुत करके इसी मोर्चे पर अपने ढंग से जूझते रहे हैं।

गुरुदेव की सात महीनों की कठिन साधना के द्वारा उपरोक्त काली घटाओं को निरस्त करने के बाद जो शक्ति बची उसे उन्होंने परिवार के प्रबुद्ध परिजनों को आवश्यक प्रकाश प्रदान करने में लगा दिया। धागे में पिरोये हुए मोतियों की तरह उन्होंने इतने बड़े परिवार को अपने साथ प्रेम बन्धनों में जकड़ कर बाँध रखा है। इस विशाल परिवार की प्रगति या पतन उनकी अपनी समस्या है। यदि अखिल विश्व गायत्री परिवार के सदस्य ऐसे ही लोभ-मोह में ग्रस्त,पेट और प्रजनन में व्यस्त, वासना और तृष्णा में, पशु जैसा जीवन जी कर मर जाते हैं तो यह गुरुदेव के लिए तो कलंक की बात है

ही, इस परिवार के लिये भी लज्जा की। हाथी के बच्चे बकरों की शक्ल में दिखें, इसमें मज़ाक हाथी का भी है और बच्चों का भी । परिवार यदि बन ही गया तो शोभा उसी में है कि उसका स्तर भी कुलपति/कुलपिता के अनुरूप हो। अपनी संतान के प्रति हर संरक्षक की ऐसी ही इच्छा रहती है, गुरुदेव की भी है। गुरुदेव हर समय इसी उधेड़बुन में लगे रहते हैं कि परिवार का प्रत्येक सदस्य महामानवों की ऐतिहासिक भूमिका निभा सके। अपना तप पुण्य देकर आरम्भिक लालच भी इसीलिए पूरा करते हैं कि आगे चलकर सम्भवतः यह बालक उनके आदेशों को अपनाने का साहस करेंगे। बसन्त पर्व पर उन्हें कुछ ऐसी ही प्रेरणायें देनी थीं। इसके लिए तप शक्ति भी अभीष्ट थी सो उन्होंने इन दिनों के उपार्जन में

से जितना कुछ बचा खुचा था इसी निमित्त लगा दिया। अधिकाँश परिजनों ने बसन्त पर्व पर उनका प्रकाश अपने इर्द-गिर्द एवं अन्तरंग में प्रस्तुत देखा भी है। इन अनुभूतियों में कल्पना-भावुकता कम और यथार्थता अधिक रही है।

माता जी बताती हैं कि पिछले सात माह की तप साधना की आमदनी और खर्च का लेखा-जोखा यही है।

गुरुदेव भविष्य में शांतिकुंज कब आयेंगे, उनका भावी कार्यक्रम क्या रहेगा? इन प्रश्नों का उत्तर देते हुए माता जी ने कहा: जब इस एकांत साधना से वितरण कर सकने योग्य कुछ मसाला संग्रहीत हो जाया करेगा तब उसके वितरण के निमित्त ही आया करेंगे। यह परिस्थितियों पर निर्भर करता है कि कुछ संचित

संग्रहीत होता है या नहीं जिसे परिवार के सदस्यों को प्रदान किया जा सके। पिछली साधना की शक्ति तो दो तीन प्रयोजनों में ही लग गयी । (1) बँगलादेश से सम्बन्धित विभीषिका (2) बसन्त पर्व (3) मेरी बीमारी। जो कमाया था वह खर्च हो गया अब शान्तिकुंज रहने का कोई तुक नहीं रहा। समय ही बतायेगा कि आगे भी कोई ऐसी ही विश्व विभीषिका तो उत्पन्न नहीं हो जाती है और उससे जूझने में ही तो नहीं जुटना पड़ता है। इसके अतिरिक्त उनके मार्गदर्शन का आदेश संकेत भी प्रधान है। अपने मार्गदर्शक (दादा गुरु) की इच्छा और आज्ञा के बिना गुरुदेव एक कदम भी कहीं नहीं चलते । दोनों प्रकार की अनुकूलता होने पर जमा पूँजी का वितरण करना ही यहाँ आने का उद्देश्य

होगा। गुरुदेव के शांतिकुंज आने के साथ अनेकों अगर-मगर जुड़े हुए हैं क्योंकि वह स्वतंत्र नहीं हैं, उच्च सत्ताओं के पराधीन हैं, उनकी अपनी कोई भी इच्छा नहीं है। यही कारण है कि वे फिर कब आयेंगे यह बताने की स्थिति में वे थे ही नहीं। कब आ सकेंगे, कब चले जायेंगे, कब तक रुकेंगे, यह निर्णय उनके अपने करने के नहीं हैं। यह निर्णय दूसरों के तथा परिस्थितियों के हाथों में है इसलिए उस पर सदा पर्दा ही पड़ा रहेगा। माता जी ने कहा कि एक मोटा कारण जो गुरुदेव ने तो नहीं बताया पर मेरी समझ में आता है कि परिजन भावावेश में उनके दर्शनों के लिए दौड़ पड़ते हैं। ऐसी स्थिति में जहाँ परिजनों के प्रेम की, मोह ममता की, स्नेह सौजन्य की

प्रशंसा की जायेगी, वहीँ उनके विवेक को हल्का भी माना जायेगा।

हर कोई अपने प्रियजन से मिलना चाहता है। गुरुदेव का अन्तःकरण प्रेम और ममता से लबालब भरा है। वे समस्त संसार को अपना मानते हैं और वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना से ओतप्रोत रहते हैं लेकिन परिष्कृत अन्तःकरण के आत्मीयजनों के प्रति तो उनकी ममता और भी प्रगाढ़ है । प्यार को मापने के लिए कोई उपकरण तो है नहीं लेकिन इतना अवश्य कह सकते हैं जितना कोई संसारी व्यक्ति अपने स्त्री बच्चों को प्यार कर सकता है उससे कम नहीं अधिक ही प्यार गुरुदेव अपने विश्व्यापी परिवार के सदस्यों को करते हैं।

ऐसी दशा में प्रतिक्रिया होना स्वाभाविक है और यह उचित ही है कि परिजन उन्हें उतना ही प्यार करें। यह भी स्पष्ट ही है कि प्यार के उभार में उफान होता है और उस उमंग में मिलन लालसा उत्कृष्ट हो उठती है। यही कारण है कि जब वे कहीं जाते थे तब लाखों व्यक्ति उनसे भेंट करने के लिए दौड़ पड़ते थे। उनके प्रवचनों में जितना प्रभाव है उससे हजार गुना अधिक आकर्षक उनका व्यक्तित्व है इसलिए आत्मीयजनों की मिलने की इच्छा उचित भी है खासकर तब जबकि वे कष्टकर कठिन परिस्थितियों में बहुत दिन उपरान्त वापिस लौटे हों।

इसका एक उदाहरण तब देखा गया जब गुरुदेव 21 से 30 जून तक 10 दिन शान्तिकुंज रहकर 100 प्रवचन

टेप कराने वाले थे और कुछ अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रशिक्षण मुझे देने वाले थे लेकिन विदाई सम्मेलन के उपरान्त भी प्रिय परिजन अपनी मोह ममता कम न कर सके और उन्हीं 10 दिनों में 1000   से अधिक व्यक्ति दर्शन के लिए हरिद्वार आ गये। योजनायें पीछे रह गई और भेंट मिलन आगे आ गया और वोह 10 अत्यन्त महत्वपूर्ण दिन ऐसे ही भावावेश की पूर्ति में चले गये। मेरी बीमारी के दिनों में भी ऐसा ही हुआ। वे इन थोड़े से दिनों को आवश्यक प्रयोजनों में लगाना चाहते थे लेकिन जिन्हें पता चला वोह भावावेश में दौड़ पड़े और आवश्यकता से कहीं अधिक समय तक उन्हें यहाँ रुकना पड़ा।

हो सकता है गुरुदेव ने सोचा हो कि भविष्य में इस प्रकार की भावावेशपूर्ण पुनरावृत्तियाँ न हों, इसलिए उचित समझा हो कि अपने आने और चले जाने का समय अनिश्चित रखा जाए । गुरुदेव ने शांतिकुंज में अपना एकान्त कक्ष बना लिया है। जब तक यहाँ रहेंगे उसी में रहेंगे और आवश्यक प्रयोजनों के लिए निर्धारित समय तक ही मिलने के लिए नीचे उतरेंगे। अधिकाँश समय तो यहाँ भी एकान्त में ही रहेंगे। दर्शनार्थियों से अकारण मिलते रहना उनके लिए संभव न होगा । यों तो पहले भी गुरुदेव लोकमंगल की जीवन साधना में ही निरत थे लेकिन अब तो उस क्रम का स्तर असंख्य गुना बढ़ गया है इसलिए उनका एक-एक क्षण विश्व मानव की बहुमूल्य निधि है। उसमें भावावेश के कारण

व्यतिरेक उत्पन्न करना समस्त संसार को उस लाभ से वंचित रखना है, एक ऐसा लाभ जिस पर मानव जाति के उज्ज्वल भविष्य की संभावनायें टिकी हैं।

इसलिए गुरुदेव का निर्देश है कि जिन्हें बुलायें उन्हें ही आना चाहिए, जिन्हें मिलना नितान्त अभीष्ट हो उन्हें पहले से ही मुझे अपना नाम और प्रयोजन नोट करा देना चाहिए। यदि उचित समझा जायेगा तो उन्हें सुविधानुसार बुला लिया जायेगा। ऐसे अनुरोधों में एक ही बात ध्यान में रखने की है कि सकाम कार्यों के लिए आशीर्वाद प्राप्त करना इस मिलन का प्रयोजन नहीं होना चाहिए। जो बहुमूल्य समय लिया जाय उसमें आत्मोत्सर्ग की, परमार्थ प्रयोजनों की ही चर्चा की जाय। शाखा संगठन एवं आशीर्वाद अनुदान जैसे काम जो मुझे

सौंप दिये गये हैं उनके लिए गुरुदेव को कष्ट देना उचित नहीं।

यह तो स्पष्ट है कि उनके आगमन का अन्तिम स्थान हरिद्वार ही है। हिमालय और गंगा तट ही उनके भावी जीवन का क्रियाक्षेत्र रहेगा, गुरुदेव का कहीं और जाने का विचार नहीं है। इसमें exception केवल विदेश यात्रा है जिसके लिये गुरुदेव पहले से ही वचनबद्ध हो चुके हैं।

अध्यात्म का प्रभाव भौतिक पदार्थों पर होता है लेकिन विज्ञान इस तथ्य को नहीं मानता। गुरुदेव का कहना है कि विचार विचारों को प्रभावित कर सकते हैं और भावना भावनाओं को। इस मान्यता को गलत साबित करने के लिए कि “विचार का प्रभाव वस्तुओं पर नहीं

पड़ सकता” और विचारों के वस्तुओं पर पड़ने वाले प्रभाव को प्रत्यक्ष करने के लिए गुरुदेव को विदेश जाना होगा। प्रवासी भारतीयों का भी आग्रह इसी प्रकार का है जो सम्भवतः कभी पूरा करना ही पड़े। इन दोनों प्रयोजनों के लिये विदेश यात्रा की तिथि अभी निश्चित नहीं है पर कभी न कभी जाना पड़ सकता है। इस exception के अतिरिक्त सप्त ऋषियों की तपस्थली जहाँ गंगा ने सात ऋषियों की सुविधा के लिए अपनी सात धारायें चीर दी थीं, वहीं अवस्थित शान्तिकुंज उनका अन्तिम आवागमन स्थल रहेगा। वहीं से उन्होंने कुछ पाया है इसलिए उसी खदान में से कुछ और बहुमूल्य रत्न खोज निकालने के लिए वे लगे ही रहेंगे।

युग परिवर्तन के साथ-साथ परिस्थितियाँ बदल जाती हैं। पृथ्वी सौर मण्डल के साथ अनन्त आकाश में भ्रमण करती रहती है। अपनी कक्षा में घूमते हुए भी वह सौर मण्डल के साथ कहीं से कहीं चली जाती है। इस परिभ्रमण में ब्रह्माण्ड किरणों की न्यूनाधिकता से मानव शरीर और मन की सूक्ष्म स्थिति में भारी अंतर पड़ जाता है। साँसारिक परिस्थितियाँ और भौतिक हलचलें, सामाजिक विधि-व्यवस्थायें भी मानव जीवन की मूलभूत स्थिति में भारी अन्तर प्रस्तुत कर देती हैं। इस परिवर्तन को ध्यान में रखते हुए ही युग साधना का स्वरूप समय-समय पर निर्धारित करना पड़ता है। प्राचीनकाल की साधना विधियाँ उस समय के मानव शरीरों की स्थिति के अनुरूप थीं, परिवर्तन के साथ

साधना क्रम भी बदलेंगे। यदि कोई बदलाव न किया जाय तो प्राचीनकाल में सफल होने वाली साधनाएँ अब सर्वथा निरर्थक और निष्फल सिद्ध होती रहेंगी।

अब अतिआवश्यक हो गया है कि इस विषय पर रिसर्च की जाए नहीं तो साधकों की यह शिकायत बनी ही रहेगी कि हमने ग्रन्थों के लिये अनुसार तप साधना की लेकिन उसका कुछ परिणाम न निकला। गुरुदेव भौतिक विज्ञान की ही तरह अध्यात्म विज्ञान को भी प्रत्यक्ष देखना चाहते हैं। वे सोचते हैं कि इसके बिना सर्वसाधारण की अभिरुचि आत्मविज्ञान की ओर हो ही नहीं सकेगी। गुरुदेव के वर्तमान साधना क्रम को इसी स्तर का शोधकार्य समझा जाना चाहिए। समय, मन और शरीर की शक्तियों को उपरोक्त प्रयोजनों में लगाये

रहने की दृष्टि से ही वे प्रिय परिजनों से अलग रहने का साहस कर सके हैं। देखा जाए तो गुरुदेव को भी इस वियोग का कष्ट कम नहीं है लेकिन उत्तरदायित्व को देखते हुए परिजनों की तरह उन्हें भी मन मसोस कर अपने निर्धारित कर्त्तव्य में संलग्न रहने को विवश होना पड़ता है।

****